ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-2* Issue-9* December- 2017
Anthology : The Research

# भारतीय नारी के जीवन–विकास में हिन्दी उपन्यासों की पृष्ठभूमि

**सुयश**
शोधार्थी,
हिन्दी विभाग,
माधव महाविद्यालय,
ग्वालियर, म.प्र.

**सारांश**

भारतीय सभ्यता की प्राचीनता और उसके उत्कर्ष की कहानियां आज भी हम कहते हैं और आज भी उन स्वर्ण युगों की महत्ता के आधार पर ही संसार में हमारे अस्तित्व का कुछ न कुछ गौरव है। आज यद्यपि भारतीय महिलाओं की दशा अत्यंत चिन्ताजनक है, फिर भी यह मानने से कोई इनकार नही कर सकता कि प्राचीन भारत में स्त्रियों का एक खास स्थान था। पुरूष समाज आज की तरह अवहेलना नहीं किया करता था। वेद इसके साक्षी हैं कि स्त्री स्वयं शक्तिरूपा समझी जाती थी, और पत्नी–रूप में उसे पाने पर पुरूष का भाग्य सराहा था, और वह ईश्वर का सर्वमंगलमय कोमल अवदान समझी जाती थी। समाज में उनका गौरव और सम्मान था। हमारे पूर्वज स्वाधीनता का उपयोग करते थे और स्त्रियां भी इस सुख से वंचित नहीं थी। नारी के बिना पुरूष अधूरा, अपूर्ण समझा जाता था, पुरूष को पूरा करने के लिए नारी की आवश्यकता पड़ती थी, और इसलिए उसे अर्धांगिनी कहा गया है।
भले ही आज हम

''स्त्री जाति को 'शूद्र गंवार, ढोल, पशु;
नारी ये सब ताड़न के अधिकारी''

आदि अपमानजनक शब्द कहकर निरादर की दृष्टि से देखें, पर यदि हम अपने वैभवशाली अतीत की मधुर स्मृतियों की याद करें, तो हमें उनके वास्तविक उच्च स्थान का ज्ञान होगा। उस समय उनकी सामाजिक अवस्था अत्यंत समुन्नत थी; वे गृहदेवी और गृहलक्ष्मी के रूप में प्रकट हुई थी। उनमें पुरूषोचित पराक्रम तथा अपूर्ण प्रतिभा विद्यमान थी। तभी भारतवर्ष सब भांति सुखी, सम्पन्न एवं ऐश्वर्य से परिपूर्ण था।

**मुख्य शब्द :** भारतीय सभ्यता, हिन्दी उपन्यास,

**प्रस्तावना**

स्त्री और पुरूष समाज के समान रूप से दो महत्वपूर्ण अंग हैं। समाज के विकास और उन्नति के लिए किसी प्रकार भी इनमें किसी कार्य का दर्जा कम नहीं है, और दुनिया में अस्तित्व क़ायम रखने के लिए जितनी आवश्यकता पुरूष की है, उतनी ही स्त्री की भी। परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी, स्त्रियों को अक्सर नीची निगाह से देखा जाता है, और अगर नीची निगाह से देखना न भी कहें, तो कम से कम उन्हें बिल्कुल वे अधिकार और सुविधाएं प्राप्त नहीं होने दी जाती, जो आम तौर से पुरूषों को प्राप्त होती हैं।

संसार में जो अधिक से अधिक सभ्यताभिमानी और शिक्षित देश है, वास्तव में देखा जाय, तो वहां भी स्त्रियों को आज स्वतंत्रता, समानता और अधिकार प्राप्त नही जितने कि पुरूषों को प्राप्त हैं अथवा जितना पाने के लिए उन्नत स्त्री समाज उत्कंठित है। परन्तु नही, इस ज़माने में भी संसार में एक ऐसा देश है, जो उक्त परिपाटी से परे है, जो संसार में अपनी नवीनता विशेषता के लिए बहुत विख्यात हो रहा है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपने पिछले वर्मा के दौरे के सिलसिले में सिंगापुर में महिलाओं की एक सभा में भाषण देते हुए बताया कि वे नारियों को कैसा बनाना चाहते हैं। उन्होने बताया कि नारी के जीवन का लक्ष्य – नारी के जीवन का आदर्श क्या होना चाहिए। उन्होने कहा मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि मुझे ऐसी नारी नहीं पसंद

है, जो वन कुसुम की तरह – उपत्यका की पुष्प–पंखुड़ियों की तरह खिलकर एकांत में मुरझा जाती है। और उनको ऐसी नारी पसन्द है जो सदृढ़ और आत्मनिर्भर हों वे नारी को सक्षम देखना चाहते हैं।''

हिन्दी उपन्यासों की विकास–यात्रा 'परीक्षा गुरू' से प्रारम्भ होकर 'आभा' और 'माटीखाइं जनावरा' पर आकर समाप्त होती है। अठहत्तर वर्षों की इस लम्बी अवधि में हिन्दी–उपन्यास की प्रगति को विभिन्न राहों से होकर गुजरना पड़ा है। कहीं उसे कंकरीली – पथरीली संकीर्ण पगडण्डी मिली है तो कहीं विस्तीर्ण पथ। हिन्दी–उपन्यास वर्णन, घटना, समाज चरित्र–चित्रण, समस्या, व्यक्ति और मन की सरणियों से होता हुआ आगे बढ़ा है। आज उसके समक्ष विषमताओं से संकुल पथ है किंतु उसकी गति में अवरोध कहीं भी नहीं है।

हिन्दी–उपन्यासों में नारी के व्यक्तित्व – विकास का मूल तोता–मैना की कहानियाँ है। पूर्व–प्रेमचंद युग तक नारी के व्यक्तित्व को कोई स्थायित्व नहीं मिल पाता। प्रेमचंद युग तक पहुँचते–पहुँचते नारी में एक स्थिरता आ जाती है और प्रेमचंदोत्तर हिन्दी–उपन्यासों में विभिन्न समस्याओं के निरूपण में नारी का चरित्र भी एक समस्या बना जाता है। हिन्दी का उपन्यास अपनी विकास – यात्रा के प्रारम्भ से ही नारी के रूप में जिस क्षीण सूत्र को पकड़कर चला था उसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है नारी के व्यक्तित्व–विकास में हिन्दी उपन्यासों का बहुत बड़ा योग रहा है। पूर्व प्रेमचन्द–युग की नारी लहंगा पहने, घूंघट काढ़े, आभूषणों से लदी उपन्यास के पीछे–पीछे चल रही थी किन्तु आज की नारी आगे है। नारी का रूप ही बिल्कुल बदल गया है। उसकी भाषा बदल गई है – जीवन के मान बदल गये हैं और उसके विचारों में भी आमूल परिवर्तन हुए हैं। आज की नारी में जीवन की विषमताओं से लोहा लेने की अदुभुद क्षमता है। उसके प्राणों में विद्रोह की कठोर संझायें हिलोरें लेती है।

हिन्दी–उपन्यासों से हमें ऐसे अविस्मरणीय नारी–पात्र मिले हैं जो अपनी चारित्रिक विशिष्टताओं के कारण अनुपम और असाधारण हैं और जिन्हें हम भूल नहीं पाते।

प्रेमचन्द के 'सेवासदन' की सुमन ऐसा ही नारी चरित्र है। जब तक साहित्य की धारा अक्षुण्णय रहेगी, उसका चरित्र भी नहीं भुलाया जा सकेगा। सुमन हिन्दी उपन्यास–साहित्य की पहली नारी पात्र हैं जिसमें जीवन की वास्तविकता के स्वरों का स्पन्दन है। सुमन शोषण तथा पाखण्ड के विरूद्ध विद्रोह करने को तत्पर होती है, किन्तु एक परम्परागत आदर्श हिन्दू–नारी के रूप में ढुलक कर गिर पड़ती है।

प्रेमचंद का दूसरा अविस्मरणीय नारी चरित्र है– धनिया, जिसमें भारतीय गाँवों की आत्मा का अक्षय निवास है, जिसके जीवन का क्षण–प्रतिक्षण विद्रोही–भावनाओं से अनुप्राणित रहता है, जो परिस्थितियों की विषमताओं से तनकर लोहा लेना जानती है, किन्तु जिसके मन के कोने में लहराता हुआ करूणा का सागर भी कम गहरा नहीं है।

जैनेन्द्र की सुनीता और मृणाल को हम हृदय की श्रद्धा नही दे पाते किन्तु उनकी करूणा से मन भीगा–भीगा अवश्य रहता है। सुनीता ने तो जैसे अपने को दे डालकर अपने अणु–अणु में शुचिता भर ली है। किन्तु सुनीता न समझ में आने वाली एक गुत्थी है जो विराट प्रश्न चिन्ह बन के हमारे समक्ष सदा उपस्थित रहती है। मृणाल में कुछ भी नहीं है किन्तु जो कुछ है वह उसे भूलने नहीं देता। उसकी पीड़ा के अतिरेक से मन में कसक उठती है – आँखे भर आती है। इच्छा होने लगती है मृणाल की शादी किसी न किसी प्रकार उसके प्रेमी डॉक्टर से कर दें किन्तु वह मर जाती है, और इच्छा शेष रह जाती है।

इलाचन्द्र जोशी की मंजरी एक महत्वाकांक्षिणी नारी है। उसमें एक दिव्य ओजस्विता है अपमान की ठोकर खाकर यह नारी अपनी समस्त चेतनाओं से विद्रोह कर बैठती है और डॉक्टर बन जाती है।

बाबू वृन्दावनलाल वर्मा की 'झांसी की रानी' लक्ष्मीबाई का चरित्र साहित्य की अमूल्य निधि है। इतिहास की रानी लक्ष्मीबाई उपन्यास में आकर ऐसी सजीव हो उठी है कि मन में उसके प्रति एक साथ श्रद्धा, स्नेह, गौरव जैसे भाव उठने लगते हैं।

'कचनार' की गरिमा भारतीय नारी की गरिमा है उसका एकनिष्ठ प्रेम मन को अनायास ही अपनी ओर आकर्षित कर लेता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की भट्टिनी और निउनिया के चरित्रों में जो गौरव की दीप्ति है वह अविस्मरणीय है। यही दीप्ति सियारामशरण गुप्त की जमुना में भी है और संर्वदानंद वर्मा की नैना तथा सुधाकर पांडेय की अनुराधा, में भी। भगवतीचरण वर्मा की चित्रलेखा और यशपाल की दिव्या भी हिन्दी उपन्यासों के अमर नारी पात्र हैं।

नारी के विकास में हिन्दी उपन्यासों के योगदान को समझने के लिए हिन्दी–उपन्यासों द्वारा नारी के प्रति किए गए कार्यों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है।

हिन्दी उपन्यास जहाँ नारी के विकास में इतना सहायक सिद्ध हुआ है वहाँ उसने कुछ ऐसे रूप भी नारी को लेकर प्रस्तुत किये हैं जो गर्हित है।

वस्तुतः उपन्यास–लेखकों का उद्‌देश्य, समाज के वास्तविक रूप को नग्न रूप में सामने रखकर कुरीतियों व कुप्रथाओं का उन्मूलन करना रहा है। लेकिन घृणित चित्रों की अवतारणा से समाज की गन्दगियों को नहीं मिटाया जा सकता, विकृतियों से विकृतियों का दमन सम्भव नहीं

इस प्रकार नारी के जीवन–विकास में हिन्दी–उपन्यासों का बहुत बड़ा हाथ रहा है। नारी की सर्वांगीण प्रगति है जो दृश्य आज हम देख रहे हैं वे उपन्यास के कारण भी बहुत कुछ हमारे सामने आये हैं

उपन्यास के पात्र – पात्रियों का जितना गहरा प्रभाव पाठकों पर पड़ा है उतना अन्य किसी साहित्यांग का नहीं।

**निष्कर्ष**

हिन्दी उपन्यास की विकास यात्रा का एक दौर समाप्त हो चुका है, लेकिन यही तो पूर्ण नहीं है। यहाँ से अभी आगे की यात्रा के लिए हिन्दी उपन्यास तैयारी कर रहा है। पता नहीं उसकी यात्रा इस नये दौर में नारी का क्या रूप हमारे सामने आएगा? किन्तु वर्तमान गतिविधि को देखते हुए उज्ज्वल भविष्य की आशा हम अवश्य करते हैं।

**सन्दर्भ ग्रंथ सूची**

1. *जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह – स्वाधीनता, संग्राम हिन्दी प्रेस और स्त्री का वैकल्पिक क्षेत्र प्रकाशन – नई दिल्ली 2006 पृष्ठ – 21, 22*
2. *वही पृष्ठ 24*
3. *वही पृष्ठ 52*
4. *वही पृष्ठ 100*
5. *हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य पृष्ठ 495*
6. *डॉ. शैल रस्तोगी हिन्दी उपन्यासों में नारी – साहिबाबाद प्रकाशन 1977 पृष्ठ 332–333*
7. *आभा : चतुरसेन शास्त्री, 1959*